मंथन

यूथ रूबरू का मासिक विचार पत्र

वर्ष : 06
अंक : 08
माह : जून 2021
मूल्य : निःशुल्क

श्रीफल फाउंडेशन की प्रस्तुति

> संसार का हित चाहने वाले जीवों के लिए धर्म ही परम शरण है।
> - अंतर्मुखी

संपादक मण्डल

डॉ. श्रेयांस जैन
बड़ौत
प्रधान संपादक

राजेश शाह
मुम्बई
प्रबंध सम्पादक

सुरेश सबलावत
जयपुर
प्रबंध सम्पादक

अजित जैन
उदयपुर
प्रबंध सम्पादक

संपर्क नंबर : 9460155006, 9591952436

ईति-भीति व्यापे नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे

जैन धर्म और दर्शन सदियों से पर्यावरण संरक्षण की बात करता आ रहा है। जैन दर्शन के पांच मूल सिद्धांतों में अंहिसा और अपरिग्रह को सबसे ज्यादा महत्व दिया जाता है और इन दोनों का ही सम्बन्ध प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से पर्यावरण संरक्षण से है। जीवों की रक्षा करना और जरूरत से ज्यादा एकत्र ना करना ही पर्यावरण संरक्षण का मूल है।

जैन दर्शन ने ही सबसे पहले कहा था कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पतियों में जीव है और यह बात आज के वैज्ञानिक किसी ना किसी रूप में स्वीकार कर रहे हैं। जैन दर्शन मानता है कि बिना किसी कारण किसी वृक्ष से पत्ती तोड़ना भी हिंसा है तो वृक्ष को काटना तो महापाप माना गया है। इसी तरह पानी के अपव्यय को हिंसा माना गया है।

संपादकीय

जय जिनेन्द्र

हाल में हमने विश्व पर्यावरण दिवस मनाया और पूरे विश्व ने पर्यावरण की खराब होती सेहत के प्रति चिंता की। पर्यावरण का संरक्षण हम सबका मूल धर्म है, क्योंकि पर्यावरण बचेगा, तभी हम बचेंगे। जैन धर्म और दर्शन के मूल में ही पर्यावरण संरक्षण है। जैन साधुओं की चर्या और जैन श्रावकों के नित्य पूजा-पाठ, सभी में पर्यावरण संरक्षण की बात कही गई है। "मंथन" के इस अंक में हमने इसी बात को रेखांकित करने का प्रयास किया है।

इस बार के अंक का कलेवर कुछ बदला गया है। पाठकों का यह सुझाव था कि आलेख और सामग्री थोड़ी छोटी हो और चूंकि हम इसे ई-पेपर के रूप में दे रहे हैं, इसलिए पॉइंट साइज कुछ बड़ा हो। पाठकों के इस सुझाव का मानते हुए इस बार यह बदलाव कर दिए गए हैं। सेहत पर आधारित कॉलम, जीवन-सूत्र और एक जैन तीर्थ परिचय के साथ ही युवाओं को दृष्टि में रखते हुए नए कॅरियर अवसरों की संक्षिप्त जानकारी और हिन्दी लिखने में की जाने वाली गलतियों को सुधारने के लिए भी एक छोटा सा कॉलम शुरु किया जा रहा है।

आशा है आपको मंथन का नया रंग-रुप पसंद आएगा। इस और बेहतर बनाने के लिए आपके सुझाव निरंतर हमें प्रेषित करते रहें और इस प्रयास को अपना स्नेह व आशीर्वाद प्रदान करते रहें।

धन्यवाद
जय जिनेन्द्र

जैन दर्शन में पर्यावरण

आलेख - प्रथम

मनीष गोधा

पर्यावरण, यह एक ऐसा शब्द है, जिसने आज पूरी दुनिया को चिंता में डाल रखा है। दुनिया के विभिन्न हिस्सों में हर दूसरे वर्ष आने वाली प्राकृतिक आपदाएं, कोरोना जैसी वैश्विक महामारी और ग्लोबल वार्मिंग के बढ़ते खतरे ने पूरी दुनिया को पर्यावरण के प्रति चिंतित कर दिया है। हाल में कोरोना महामारी की दूसरी लहर में प्राणवायु ऑक्सीजन को लेकर जिस तरह की आपाधापी मची, उसने दुनिया के हर आदमी को पर्यावरण का महत्व समझा दिया।

दुनिया का हर धर्म किसी ना किसी रूप में पर्यावरण के संरक्षण की बात करता है और वस्तुतः देखा जाए तो पर्यावरण संरक्षण को धर्म से जोड़ना इसलिए जरूरी है कि पर्यावरण को बचाना आज हम सबका पहला धर्म बन गया है।

जैन धर्म और दर्शन सदियों से पर्यावरण संरक्षण की बात करता आ रहा है। जैन दर्शन के पांच मूल सिद्धांतों में अंहिसा और अपरिग्रह को सबसे ज्यादा महत्व दिया जाता है और इन दोनों का ही सम्बन्ध प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से पर्यावरण संरक्षण से है। जीवों की रक्षा करना और जरूरत से ज्यादा एकत्र ना करना ही पर्यावरण संरक्षण का मूल है। जैन दर्शन ने ही सबसे पहले कहा था कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पतियों में जीव है और यह बात आज के वैज्ञानिक किसी ना किसी रूप में स्वीकार कर रहे हैं। जैन दर्शन मानता है कि बिना किसी कारण किसी वृक्ष से पत्ती तोड़ना भी हिंसा है तो वृक्ष को काटना तो महापाप माना गया है। इसी तरह पानी के अपव्यय को हिंसा माना गया है।

परास्परोपग्रहो जीवानाम

यह जैन धर्म के मूल सिद्धांतों में से एक है। इसका अर्थ है परस्पर एक-दूसरे जीव का उपकार करना चाहिए। इसे प्रत्यक्ष तौर पर पर्यावरण संरक्षण से जोड़ा जा सकता है, क्योंकि जब हम हर जीव पर उपकार करेंगे, उसे संरक्षित करेंगे तभी तो पर्यावरण बचा रहेगा। प्रकृति ने प्रत्येक जीव को किसी ना किसी उद्देश्य के लिए जन्म दिया है और यही कारण है कि हर जीव का बने रहना पर्यावरण संरक्षण की पहली शर्त है।

प्रत्येक जैन श्रावक ऐसी भावना रखता है

जैन शास्त्रों और पूजा-पाठ में भी पर्यावरण संरक्षण की बात नजर आती है और प्रत्येक जैन श्रावक जब स्वाध्याय और पूजा-पाठ करता है तो इन्हें दोहराता है।

जैन पूजन के समापन पर शांतिपाठ में कहा जाता है-

होवे सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समय पै तिल भर न रहे व्याधियों का अंदेशा।।
होवे चोरी न मारी, सुखमय वरतै हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं जिनवर वृष को, जो सदा सौख्यकारी।।

"मेरी भावना" पाठ में कहा गया है-

ईति भीति व्यापै नहीं जग में, वृष्टि समय पर हुआ करे,
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजा का किया करे।
रोग मरी दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांति से जिया करे,
परम आहिंसा धर्म जगत में, फैल सर्व हित किया करे।।

इसी तरह आलोचना पाठ में कहा गया है-

पृथ्वी बहु खोद कराई, महलादिक जाँगा चिनाई।
पुनि बिन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखाते पवन बिलाल्यो।
हा हा परमाद बसाई, बिन देखे अग्नि जलाई।
तामधि जीव जे आये ते हूँ परलोक सिधाये।
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमिकुल बहुघात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये।।

इस तरह पर्यावरण की चिंता जैन आचार्य और जैन श्रावक प्रतिदिन करते हैं और पूरे विश्व से भी यही अपेक्षा करते हैं कि वे जल, जंगल और जमीन को बचाए रखने के लिए पूरी गम्भीरता से प्रयास करें।

काव्य मन

ज्ञान और अज्ञान

संजीव

समझना है यदि
ज्ञान व अज्ञान को
तो स्मरण करना होगा
ज्ञान व अज्ञान की विशेषताओं का
बहुत बारीक होती है लकीर
ज्ञान व अज्ञान के बीच की

जिसके कारण हो
विनाश, क्रूरता, स्वार्थ
अशान्ति, भय में वृद्धि
वह कहलाता अज्ञान

जिसके कारण हो
निर्भिकता, सहनशीलता
विनम्रता, परोपकारिता में वृद्धि
वह कहलाता ज्ञान

जो करे प्रेरित
शक्तियों का अपनी
दुरुपयोग के लिये
वह कहलाता अज्ञान

जो करे प्रेरित
शक्तियों का अपनी
ना केवल अपने उत्तरदायित्वों की पूर्ति
बल्कि अपने से पहले
करे प्रोत्साहन संसार के उद्धार को
वह कहलाता ज्ञान

परोपकार व सृजन जो कराये
दूसरे की भावनाओं को जो समझाये
आदर दूसरे का करना जो सिखाये
वह कहलाता ज्ञान

जो ना करे सिर्फ अपना उद्धार
दूसरों के सुख दुःख का
बनाये अपितु जो संवेदनशील
वह कहलाता ज्ञान

जो संसार के मोह में बाँधे
माया के जाल में जो जकड़े
छुट ना पाये फिर इस चक्कर से
वह कहलाता अज्ञान

जहाँ होते नहीं कोई प्रश्न
जहाँ होती नहीं कोई जिज्ञासा
जड़ता जहाँ समाती जाती
वह कहलाता अज्ञान

जहाँ होते हैं प्रश्न
जहाँ होती है जिज्ञासा
चैतन्यता जहाँ सदा बढ़ती जाती
वह कहलाता ज्ञान

जो करे प्रशस्त मार्ग मुक्ति व मोक्ष का
जो करे ज्ञान की पूर्णता का
जो करे ज्ञान की सर्वोच्चता का
वह कहलाता आत्मज्ञान

डाटा एनेलिस्ट : नया और उभरता कॅरियर ऑप्शन

कैरियर मंत्र

आज पूरी दुनिया में सबसे महत्वपूर्ण चीज डाटा है। हम सबके नाम, फोन नम्बर, मोबाइल नम्बर, ई-मेल एड्रेस आदि इतनी जगह पहुंच चुके हैं कि हमें भी नहीं पता कि वो कितनी कम्पनियों के काम आ रहे हैं। डाटा के इस महत्व ने एक नए कॅरियर की सम्भावनाओं को जन्म दिया है, जिसका नाम है डाटा एनेलिस्ट।

किसी भी कम्पनी के पास सिर्फ डाटा होना ही पर्याप्त नहीं है। उस डाटा का सही इस्तेमाल होना भी जरूरी है। यही काम डाटा एनेलिस्ट करते हैं। ये डाटा का विश्लेषण कर इसे कम्पनी के लिए उपयोगी और समझ में आना लायक बनाते हैं। यदि आप गणित (मैथ्स) और सांख्यिकी (स्टेटसटिक्स) में रूचि रखते हैं और इन विषयों में अच्छा प्रदर्शन करते रहे है तो यह आपके लिए बहुत अच्छा कॅरियर ऑप्शन है। इसके अलावा इसके लिए कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग लैंग्वेज जैसे फायटॉन और एसक्यूएल की अच्छी जानकारी भी जरूरी है। इस कॅरियर के बारे में ज्यादा जानकारी के लिए आपको कहीं भटकने की जरूरत नहीं है। गूगल पर बस डाटा एनेलिस्ट टाइप करेंगे तो कई साइटें खुल जाएंगी जो आपको इसके बारे में जानकाी दे सकती हैं।

इन शब्दों को ऐसे लिखिए

हिन्दी हमारी मातृभाषा है और इसे सही लिखना बहुत जरूरी है। आज हमारे ज्यादातर बच्चे और युवा अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में पढ़ते हैं, इसलिए अक्सर हिन्दी के कुछ शब्दों को लिखने में गलती करते हैं। इस कॉलम में हम हर बार पांच ऐसे शब्द बताएंगे जो अक्सर गलत ढंग से लिखे जाते हैं। वैसे तो हिन्दी लिखने का सर्वमान्य नियम यही है कि जो बोलते हैं, वहीं लिखिए। फिर भी गलतियां होती हैं, तो हम आपको ऐसे शब्दों का गलत और सही रूप बताएंगे।

क्रम	गलत	सही
1	अँगुठा	अँगूठा
2	अंजली	अंजलि
3	अंतर्राष्ट्रीय	अंतरराष्ट्रीय
4	इसाई	ईसाई
5	करिएगा	कीजिएगा

सेहत की बात

पानी में है सेहत का खजाना

पानी के बारे में क्या कहें, बिन पानी सब सून। पानी के बिना किसी भी मानव, पशु-पक्षी, वनस्पति का जीवन सम्भव नहीं है। ऐसे में पानी का महत्व बताने की तो जरूरत नहीं है, लेकिन पानी आपकी सेहत के लिए कितना जरूरी है, यह भी जानना आवश्यक है। **तो जानिए पानी कैसे सुधारता है आपकी सेहत :**

- कुछ जीवों में, उनके शरीर के वजन का 90 प्रतिशत पानी से आता है। मानव वयस्क शरीर में 60 प्रतिशत तक पानी होता है।
- पानी शरीर से अपशिष्ट को बाहर निकालने, शरीर के तापमान को नियंत्रित करने, मस्तिष्क के कार्य में मदद करता है।
- यह लार बनाने में मदद करता है। लार में इलेक्ट्रोलाइट्स, बलगम और एंजाइम की छोटी मात्रा भी शामिल है। ठोस भोजन को तोड़ने और अपने मुंह को स्वस्थ रखने के लिए यह आवश्यक है।
- पसीना हमारे शरीर को ठंडा रखता है, लेकिन अगर आप अपने खोए हुए पानी की भरपाई नहीं करेंगे तो आपके शरीर का तापमान बढ़ जाएगा।यदि आपको सामान्य से अधिक पसीना आ रहा है, तो निर्जलीकरण से बचने के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी पीते रहें।
- पानी का सेवन जोड़ों, रीढ़ की हड्डी, और ऊतकों को लुब्रिकेट और कुशन करने में मदद करता है।
- स्वस्थ मल होने और कब्ज से बचने के लिए आपको अपने सिस्टम में पर्याप्त पानी की आवश्यकता होती है।
- हमारी पुरानी सोच के विपरीत, विशेषज्ञ भोजन के पहले, दौरान और बाद में पीने के पानी की पुष्टि करते हैं, जिससे आपका शरीर आपके द्वारा खाए जाने वाले भोजन को आसानी से तोड़ने में मदद करेगा।
- पानी आपके भोजन से विटामिन, खनिज, और अन्य पोषक तत्वों को शरीर के बाकी हिस्सों में उपयोग के लिए पहुंचाता है।
- डाइटिंग और व्यायाम करते समय अधिक पानी पीने से आपको अतिरिक्त वजन घटाने में मदद मिल सकती है।
- पर्याप्त पानी पीने से कब्ज, पथरी, व्यायाम से होने वाले अस्थमा, मूत्र पथ के संक्रमण, उच्च रक्तचाप से बचा जा सकता है।
- रिसर्च बताते हैं कि पर्याप्त पानी नहीं पीने से आपके ध्यान, सतर्कता और अल्पकालिक स्मृति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- पर्याप्त पानी का सेवन आपकी त्वचा को हाइड्रेट रखने में मदद करता है।
- पुरुषों के लिए प्रत्येक दिन लगभग 3.5 से 4 लीटर और महिलाओं के लिए लगभग 2.5 से 3 लीटर दैनिक पानी की जरूरत होती है। आदर्श रूप से पुरुष पेय पदार्थों से लगभग 3.0 लीटर पानी, और महिलाओं, पेय पदार्थों से लगभग 2.12 लीटर का उपभोग करते है।
- प्यास लगना इंगित करता है कि आपका शरीर पर्याप्त हाइड्रेशन प्राप्त नहीं कर रहा है। मूत्र यदि गहरे रंग का होता है वह निर्जलीकरण का संकेत देता है।
- मध्याह्न तक निर्धारित मात्रा का आधा पानी पी लें।

आगामी अंक-8

20वीं सदी की चारित्र कथा

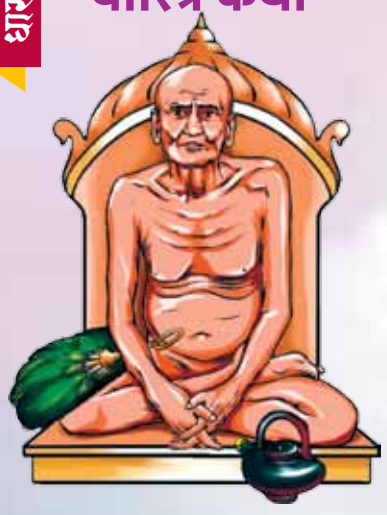

आचार्य शांति सागर जी

विदुषी माता से सातगौड़ा में हुआ धर्म और संस्कारों का बीजारोपण

बच्चों को संस्कार उनके माता-पिता से मिलते हैं। जैन धर्म में संस्कारों का बीजारोपण करने के लिए 45 दिन के बच्चे को मंदिर ले जाकर अष्ट मूलगुणों (मद्य, मांस, मधु, बड़, पीपल, पाकर, कठूमर, गूलर) का त्याग करवाया जाता है। बच्चे के आठ वर्ष तक का होने तक यह माता-पिता की जिम्मेदारी होती है, वे बच्चे को इसके बारे में बताएं और इन अष्ट मूलगुणों से दूर रखें। ऐसे ही अपूर्व संस्कार सातगौड़ा को उनकी माता सत्यवती और पिता भीमगौड़ा से मिले थे। माता सत्यवती गांव आने वाले हर महात्मा, दिगंबर मुनिराज की आवभगत बड़े ही प्रेम और श्रद्धा से करती थीं। यहीं बालक सातगौड़ा उनकी सेवा में तत्पर रहते और संतों-महात्माओं के जीवन में धर्म के विकसित और परिपक्व स्वरूप को देखा करते थे। यहीं से उन्हें जीवन को उज्ज्वल बनाने की प्रेरणा भी मिलती थी। कहते हैं कि माता किसी भी बालक की प्रथम गुरु होती है और यह बात हमें सातगौड़ा के जीवन पर नजर डालने पर भी दिखाई देती है। सातगौड़ा अपनी विदुषी माता से तीर्थंकरों के चरित्र, मोक्षगामी पुरुषों की बातें सुनते और शिक्षा प्राप्त करते थे। इसी वजह से आगे चलकर उनमें मुनि बनने का भाव जाग्रत हुआ। परिवार का स्वस्थ, धार्मिक वातावरण किस तरह से किसी बालक के जीवन पर सकारात्मक प्रभाव डालता है, यह हम सातगौड़ा के परिवार से सीख सकते हैं।

लेखक
अंतर्मुखी मुनि पूज्य सागर महाराज
(शिष्य आचार्य अनुभव सागर जी महाराज)

कथा-सरिता

मुनिराज के समताभाव ने राजा को बनाया सम्यकदर्शी

महाराज श्रेणिक ने धर्म के विद्वेश में यशोधर मुनिराज के गले में एक मरा हुआ सर्प डाल दिया और राजभवन में जाकर अपनी रानी चेलना को यह समाचार सुनाया। यह समाचार सुनते ही चेलना दुखी हो कर विलाप करने लगी। यह देखकर श्रेणिक ने कहा "देवी! इसमें रोने और दुखी होने की क्या बात है? उन्होंने तो उस सर्प को कभी का निकालकर फेंक दिया होगा।"

यह सुनकर चेलना बोल उठी "राजन! अनर्थ! घोर अनर्थ! आपने उन्हें दुख देने का प्रयत्न किया है। वीतरागी दिगम्बर साधु उस दुख से बचने के लिए उस सर्प को निकालकर कभी नहीं फेंक सकते क्योंकि उनके लिए सुख-दुख की सभी सामग्री एक समान है। वे इसे दुख मानते ही नहीं हैं।

इस बात का विश्वास करने के लिये राजा और रानी मुनिराज यशोधर के पास पहुँचे। वहाँ पहुँच कर देखा कि लाखों चीटियों ने मुनिराज के सारे बदन को काट-काटकर सुजा दिया है। चेलना ने जमीन पर चीनी डालकर चींटियों को उतारा और साँप को मुनिराज से अलग किया। उपसर्ग दूर हुआ समझकर मुनिराज ने अपनी समाधि खोली। राज-रानी ने मुनिराज के चरणों मे नमस्कार किया। मुनिराज ने दोनों को समान रूप से सहर्ष शुभाशीर्वाद दिया और कहा कि "तुम दोनों का कल्याण हो"।

राजा श्रेणिक इस महान् वीतरागी संत का अपूर्व समताभाव देखकर उनके चरणों में गिर गए और क्षमा याचना करने लगे। उन्होंने कहा कि "धन्य हैं रत्नत्रयधारी वीतरागी सन्तों की समतादृष्टि!" इस समताभाव से श्रेणिक इतने प्रभावित हुये कि वे जैन धर्म के दृढ. श्रद्धानी बन गए। उन्होंने भगवान महावीर स्वामी के समवसरण में क्षायिक सम्यक्दर्शन प्राप्त कर तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया। वे उत्सर्पिणी काल के महापद्म नामक प्रथम तीर्थंकर बनकर स्वयं संसार से मुक्त होगे और अनन्तजीवों के आत्मोद्धार में आदर्श बनेंगे।

प्रश्न-उत्तर

प्र.: जैन धर्म के ध्वज में कितने रंग होते हैं?
उ.: जैन धर्म के ध्वज में पांच रंग होते हैं।

प्र.: ये पांच रंग कौन से हैं?
उ.: ये पांच रंग हैं: लाल, पीला, सफेद, हरा और काला।

प्र.: ध्वज में दिए गए पांच रंग किसके प्रतीक हैं?
उ.: ध्वज में दिए गए पांच रंग पंचपरमेष्ठी के प्रतीक हैं। इनमें
लाल: सिद्ध भगवान, मुक्त आत्माओं का प्रतीक है।
पीला: आचार्यों,
सफेद: अरिहंत, शुद्ध आत्माओं के प्रतीक है, जिन्होंने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया हो।
हरा: उपाध्यायों और
काला: साधुओं और अपरिग्रह का भी प्रतीक है।

प्र.: ध्वज के मध्य में बना स्वास्तिक किस बात का प्रतीक है?
उ.: ध्वज के मध्य में बना स्वस्तिक चार गतियों का प्रतीक है।

प्र.: ये चार गतियों कौनसी हैं?
उ.: मनुष्य, देव, तिर्यंच, और नारकी।

प्र.: स्वास्तिक के ऊपर बने तीन बिंदु किस बात के प्रतीक हैं?
उ.: स्वस्तिक के ऊपर बने तीन बिंदु रत्नत्रय के प्रतीक हैं। ये रत्नत्रय हैं: सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र।

प्र.: इसका सम्पूर्ण अर्थ क्या है?
उ.: स्वास्तिक और उस पर बने तीन बिंदुओं का सम्पूर्ण अर्थ है कि रत्नत्रय धारण कर जीव 4 गतियों में जनम मरण से मुक्ति पा सकता है।

प्र.: इन बिंदुओं के ऊपर भी एक आकृति है, वह क्या है?
उ.: यह आकृति सिद्धशिला है।

जीवन-सूत्र

अपने लक्ष्य पर नजर रखो और तब तक मत रुको जब तक आप इसे पूरा नहीं कर लेते।
- अज्ञात

मैं आपको सफल होने का एक निश्चित तरीका या सूत्र तो नहीं बता सकता परन्तु आपको विफलता का एक सूत्र बता सकता हूँ और वो है 'हर समय हर किसी को खुश करने की कोशिश करना'
-हर्बर्ट बेयार्ड स्वॉप

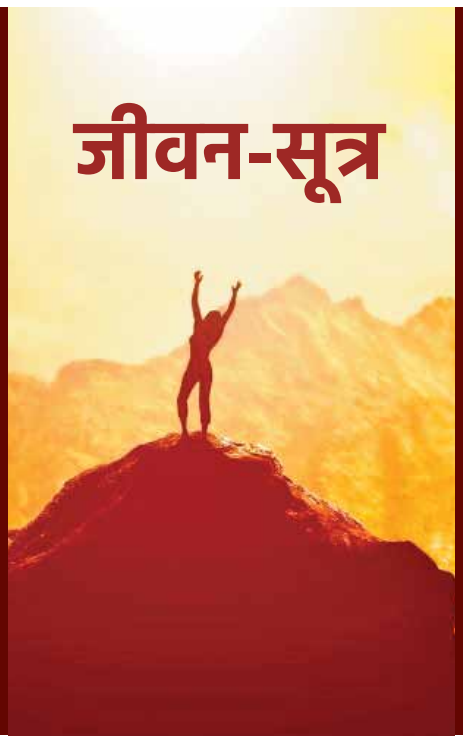

दृढ इच्छाशक्ति सफलता और असफलता के बीच का अंतर है।
- डेविड सर्नोफ्फ

आप अपने विश्वास की शक्ति द्वारा अपने कठिन समय को भी जीत सकते हैं।
- अज्ञात

अपने हारने के डर को कभी भी अपने जीतने के उत्साह से अधिक मत होने दो।
- रॉबर्ट कियोसाकी

यह चित्र कुछ कहता है

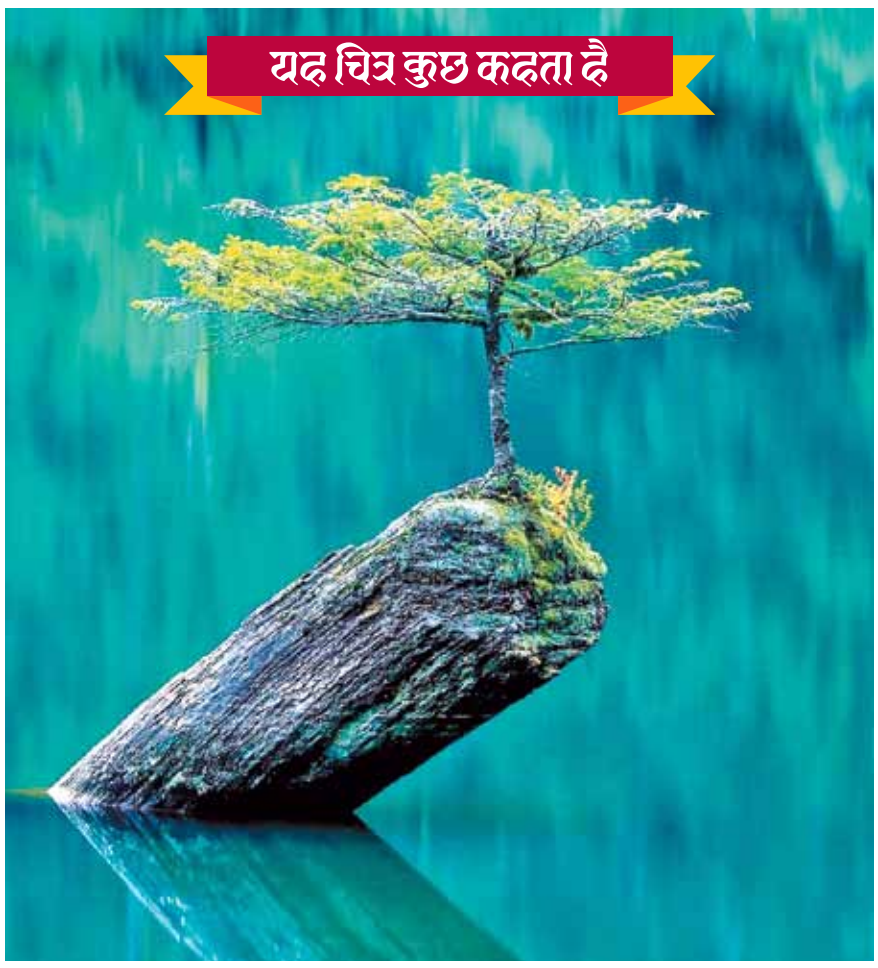

विषमता में मनोबल

शिखा जैन
जयपुर

युवा विचार

मन का प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है। कहावत भी है "मन के हारे हार है,मन के जीते जीत"। जिनका मनोबल मजबूत होता है वह हर मुश्किल को आसानी से पार कर लेते हैं। किसी भी विपरीत परिस्थिति में घबराते नहीं हैं। किसी भी कठिन परिस्थिति का सामना करने के लिए एक सकारात्मक सोच का होना बहुत जरूरी है।

माना कि आज परिस्थितियां बहुत विषम हैं, लेकिन हमें हिम्मत नहीं हारनी है। हमें इन मुश्किलों का हिम्मत से सामना करना है। एक दूसरे का संबल बनना है। एक दूसरे की हिम्मत बढ़ानी है। एक व्यक्ति का मनोबल दूसरे व्यक्ति को भी प्रभावित करता है। हमें एक दूसरे का मनोबल बढ़ाना है।

जैसे एक छोटी सी चींटी किसी भी परिस्थिति में हार नहीं मानती उसी प्रकार हमें भी हार नहीं माननी है। हमें डटकर इस महामारी से लड़ना है और इसके सभी नियमों का अच्छे से पालन करना है। हमें एक दूसरे से दूरियां बनाकर रखनी है लेकिन एक दूसरे का साथ नहीं छोड़ना है। सबको साथ मिलकर लड़ना है और इस संकट से उबरना है और यह हम सब मिलकर जरूर कर पाएंगे।

हमारा धर्म भी हमारे जीवन में सकारात्मक दृष्टिकोण लाता है। हमें अपने धर्म का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए और अध्यात्म की ओर अग्रसर होना चाहिए। यदि हम अध्यात्म को जीवन का हिस्सा बनायेंगे तो हम किसी भी विषम परिस्थिति से नहीं घबराएंगे।

यह वक्त भी गुजर जाएगा। इस विश्वास की लौ को हमें जलाए रखना है। पूरा है विश्वास हम होंगे कामयाब।

तीर्थराज अयोध्या

तीर्थ परिचय

पूर्वी उत्तरप्रदेश के फैजाबाद जनपद में स्थित अयोध्या भगवान राम ही नहीं बल्कि पांच तीर्थंकरों भगवान् आदिनाथ, अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, सुमतिनाथ और अनन्तनाथ की जन्मस्थली भी है। जैनधर्म के अनुसार तीर्थंकरों की जन्मभूमि होने से यह अयोध्या नगरी शाश्वत एवं अनादि तीर्थ है। यहां भगवान रामलला का भव्य मंदिर तो बन ही रहा है, वहीं हिन्दू धर्मानुयायियों के वहाँ लगभग 15000 छोटे-बड़े मंदिर हैं तथा चैबीस घंटे राम नाम की ध्वनि वहाँ के वातावरण को पवित्र बनाए हुए है। हम बताते हैं आपको यहां स्थित दिगम्बर जैन मंदिरों के बारे में-

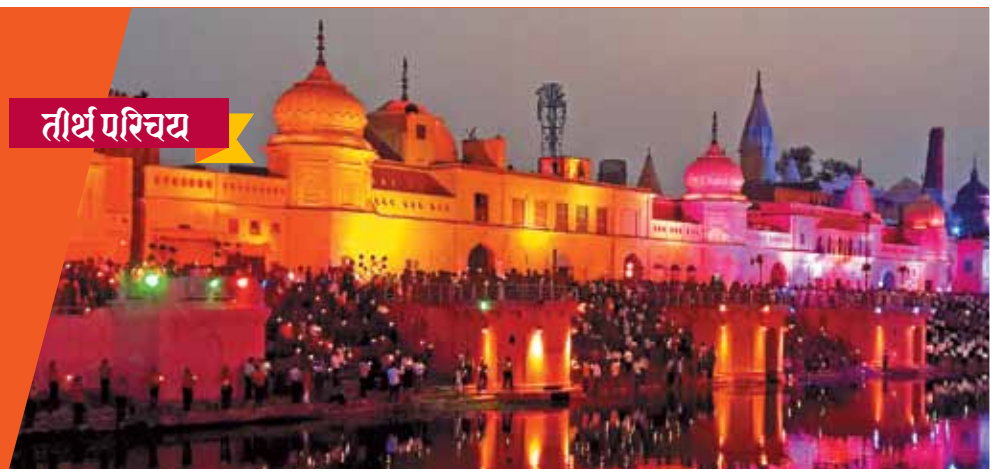

इस शाश्वत जैन तीर्थ पर कटरा मुहल्ले में एक प्राचीन जैन मंदिर है जहां सन् 1952 में परम पूज्य आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज की प्रेरणा से भगवान आदिनाथ, भरत, बाहुबली की खड्गासन प्रतिमाएँ विराजमान हुई थीं। प्रांगण के बीचोंबीच में तीर्थंकर सुमतिनाथ के जन्मस्थल का प्रतीक सुमतिनाथ की टोंक है।

तीर्थंकरत्रय टोंक

यहाँ पास में ही (कटरा में) एक स्थल पर पांडुकशिला बनी हुई है । 1995 में श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से यहाँ तीर्थंकर श्री शांतिनाथ, और एवे कुन्थुनाथ अरहनाथ के चरण विराजमान किए गए हैं।

भगवान ऋषभदेव टोंक

स्वर्गद्वार मोहल्ले में भगवान् ऋषभदेव के जन्मस्थल के प्रतीक के रूप में उनकी टोंक है जहाँ 16 सीढ़ी ऊपर चढ़कर भगवान के प्राचीन चरण हैं। चरणों के पास ही दीवार में भगवान ऋषभदेव के जीवन परिचय और अर्घ से उत्कीर्ण एक शिलापट्ट लगवाया गया है। सन् 2011 में पूज्य ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से यहां भगवान ऋषभदेव का भव्य जिनमंदिर बनवाया गया है।

लघु कैलाशपर्वत

माताजी की प्रेरणा से ही यहां बरामदे में एक लघु कैलाशपर्वत का निर्माण करके उस पर भगवान ऋषभदेव के चरण विराजमान किये गये।

अजितनाथ टोंक

बेगमपुरा मुहल्ले में भगवान अजितनाथ के चरण विराजमान है। यहाँ काफी खुला स्थान है और अजितनाथ भगवान का पूर्ण परिचय अर्घावली का एक शिलापट्ट यहाँ गणिनी माताजी की प्रेरणा से लगाया गया है।

अभिनन्दननाथ टोंक

कटरा तथा ऊँची सरकारी टंकी के पास एक कम्पाउंड के भीतर अभिनंदननाथ भगवान के चरण विराजमान हैं। यहाँ पर भगवान के पूर्ण परिचय एवं अर्घ का एक शिलापट्ट लगाया गया है।

भरत-बाहुबली टोंक

अभिनन्दननाथ टोंक के पास ही यह टोंक है जहाँ अयोध्या में जन्में प्रथम चक्रवर्ती भरत तथा प्रथम कामदेव बाहुबली के चरण विराजमान हैं। इस टोंक पर एक मंदिर का निर्माण करके उसमें भरत-बाहुबली स्वामी की अत्यन्त सुन्दर-मनोहारी खड्गासन प्रतिमाएँ विराजमान की गई हैं।

अनंतनाथ टोंक

सरयू नदी के तट पर राजकीय उद्यान के पीछे एक बड़े परिसर में भगवान अनन्तनाथ के चरण विराजमान हैं। पूज्य माताजी की प्रेरणा से अयोध्या में जन्में पाँच तीर्थंकरों के अतिरिक्त 19 तीर्थंकरों के चरण विराजमान कर उनके परिचय एवं अर्घ के शिलाफलक लगाए गये हैं। यहाँ पर एक कमरे में सप्तऋषि चारणऋद्धिधारी मुनियों के चरण तथा एक कमरे में ऋषभदेव की पुत्री आर्यिका श्री ब्राह्मी-सुन्दरी माताजी के चरण विराजमान कर उनके इतिहास को शिलापट्ट पर लगाया गया है।

बड़ी मूर्ति

अयोध्या के रायगंज मोहल्ले में आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज की प्रेरणा से उनके सानिध्य में एक 31 फुट ऊँची भगवान आदिनाथ की खड्गासन प्रतिमा स्थापित हुई। एक विशाल मंदिर का निर्माण हुआ। बड़ी मूर्ति के दाएँ-बाएँ अजितनाथ, अभिनन्दननाथ, धर्मनाथ तथा सुमतिनाथ-अनंतनाथ, चन्द्रप्रभ की 5-5 फुट ऊँची खड्गासन प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

तीन चैबीसी मंदिर

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के अयोध्या प्रवास के बीच यहां 72 पंखुड़ी के एक गुलाबी कमल पर पंचकल्याणक प्रतिष्ठापूर्वक त्रयकालिक चैबीसी की 72 जिनप्रतिमाओं को विराजमान किया गया।

समवसरण मंदिर

पूज्य माताजी की पावन प्रेरणा से मूल मंदिर के बाईं ओर इस मंदिर का निर्माण हुआ है। इसमें बाईस फुट की गोलाकार शिला पर शास्त्रोक्त विधि से भगवान ऋषभदेव के समवसरण का चित्रण अतिसुन्दर ढंग से दर्शाया गया है।

शासन देवताओं की वेदी

रायगंज के बड़े मंदिर में गणिनी माताजी की प्रेरणास्वरूप भगवान ऋषभदेव के शासन देव गोमुख यक्ष एवं शासनदेवी चक्रेश्वरी माता की वेदियाँ बनवाई गई हैं तथा तदाकार क्षेत्रपाल एवं पद्मावती माता की दो वेदियाँ बनाई गई हैं।

गुरु मंदिर

रायगंज मंदिर के परिसर में समवसरण मंदिर के ठीक सामने एक भवन में कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य श्री कुंदकुंद स्वामी की मूर्ति तथा उसके एक ओर बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर महाराज के चरण एवं दूसरी ओर ऋषभदेव प्रतिमा निर्माण के प्रेरणास्रोत भारत गौरव आचार्यरत्न श्री देशभूषण महाराज के चरण विराजमान किये गये हैं ।

ऋषभदेव की उत्तुंग पद्मासन प्रतिमा

सरयू तट पर बने भगवान ऋषभदेव राजकीय उद्यान में पूज्य माताजी की प्रेरणा से एक 21 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की पद्मासन प्रतिमा स्थापित हैं।

hi.encyclopediaofjainism.com से साभार

विविधता एवं विषमता का कारण कर्म : एक चिन्तन

डॉ. श्रेयांस कुमार जैन
अध्यक्ष, अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रि-परिषद्

कर्मशक्ति ही प्राणियों को नाना रूपों में परिवर्तित करती रहती है।

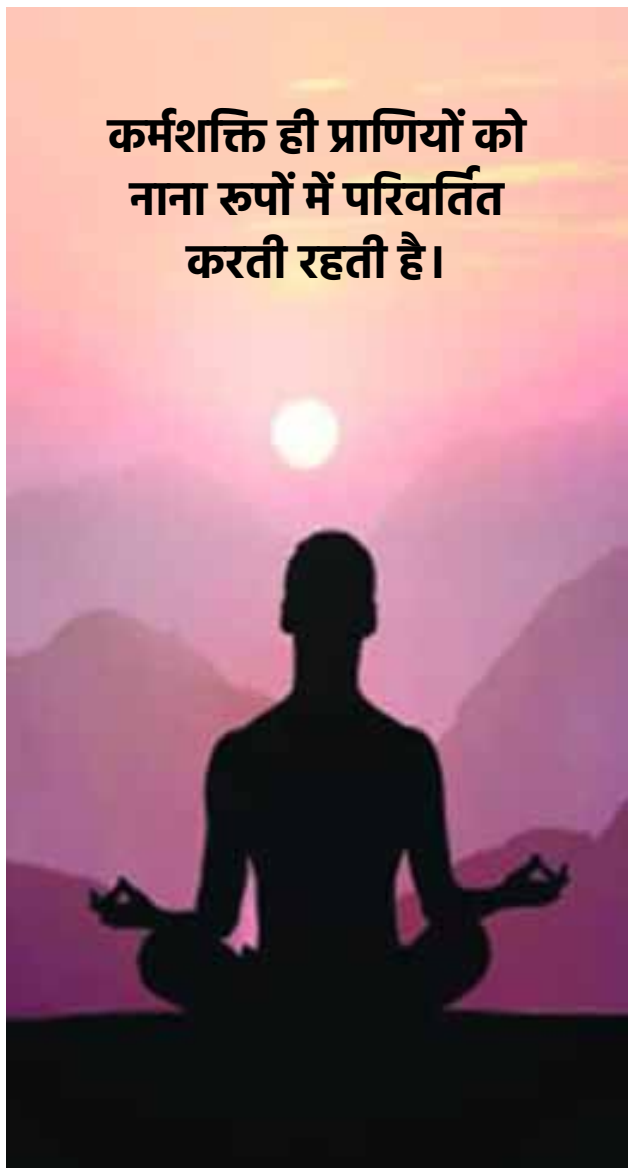

संसार रूपी रंगमंच पर अनेक पात्रों का आवागमन निरन्तर होता रहता है। इनमें किसी को सम्मान मिलता है तो किसी को अपमान मिलता है। कोई ज्ञानी है तो कोई अज्ञानी है। कोई धनवान् है, तो कोई निर्धन है। कोई स्वस्थ होने के कारण इठलाता है तो कोई अवस्थता के कारण शय्या पर कराहता रहता है। किसी के देखने के लिए जनमानस की आँखें लालायित रहती हैं तो कोई फूटी आँख भी नहीं सुहाता। इस विभिन्नता के मूल में कोई न कोई शक्ति अवश्य होनी चाहिए। जब उस शक्ति के विषय में विचार किया जाता है तो कर्म के सिवाय कोई दूसरी शक्ति चिन्तन में नहीं आती है। कर्मशक्ति ही प्राणियों को नाना रूपों में परिवर्तित करती रहती है।

इस बलवती शक्ति पर किसी का वश नहीं चलता। इसका प्रकोप जिस जीवन में हो जाता है उसे लोमहर्षक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। इतिहास साक्षी है कर्मशक्ति के प्रभाव से अनन्तबली तीर्थकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव आदि महापुरुषों को कष्ट भोगना पड़े। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव को तेरह माह 8 दिन निराहार रहना पड़ा। चरम तीर्थकर भगवान् महावीर को असह्य और भीषण उपसर्गों को सहन करना पड़ा। सगर चक्रवर्ती को एक साथ 60 हजार पुत्रों के मरण का दुःख भुगतना पड़ा। छह खण्ड के नाथ सनत्कुमार चक्रवर्ती को कुष्ठ रोग का भयंकर कष्ट सहन करना पड़ा। मर्यादा पुरुषोत्तम राम को 14 वर्षों तक बनों में घूमना पड़ा। कर्मयोगी वासुदेव श्रीकृष्ण को कारागार में जन्म लेना पड़ा। पाण्डवों को बारह वर्ष संकट झेलने पड़े तथा अज्ञातवास में समय व्यत करना पड़ा। इन ऐतिहासिक उदाहरणों से स्पष्ट है कि कर्म के अलावा और कोई प्रभाव डालने में समर्थ नहीं है।

'कर्म' शब्द व्यापक है। व्याकरण शास्त्र में 'कर्मकारक' को कर्म कहा जाता है, जिसे कर्त्ता अपनी क्रिया के द्वारा प्राप्त करना चाहता है। जनसामान्य में 'कर्म' शब्द का अर्थ क्रिया समझा जाता है। इनके द्वारा खाना-पीना, चलना-फिरना आदि क्रिया का भी 'कर्म' के नाम से व्यवहार किया जाता है। नैयायिक उत्क्षेपण, अपेक्षपण, आकुंचन, प्रसारण और गमन रूप पाँच सांकेतिक क्रियाओं में 'कर्म' शब्द का व्यवहार करते हैं। कर्मकाण्डी मीमांसक यज्ञ आदि क्रिया के अर्थ में 'कर्म' शब्द का प्रयोग करते हैं। पौराणिक परम्परा में व्रत नियम आदि धार्मिक क्रियाओं को 'कर्म' रूप में स्वीकार किया गया है। योगदर्शन में संस्कार को वासना, कर्म या अपूर्व कहा गया है। अविद्या, अस्मिता, राग द्वेष और अभिनिवेज्ञ इन पाँच कर्म और कर्म से पाँच क्लेश इस प्रकार के कारण कार्यभाव को वीजाङ्कुर की भाँति अनादि माना है।

सांख्यदर्शन में कर्म को प्रकृति का विकार माना है। अचेतन प्रकृति को ही कर्म तथा कर्मयुक्त का कारण माना गया है। वेदान्त में विश्ववैचित्र्य का कारण 'माया' है। बौद्ध दार्शनिकों की मान्यता है कि जो कर्म मनुष्य करता है उस कर्म के अनुसार ही संस्कार पड़ जाते हैं। मनुष्य को पूर्वकृत कर्मों का फल इन संस्कारों के कारण ही मिलता है। इन दार्शनिकों के विचारों को जानकर यह स्पष्ट है कि अच्छे-बुरे कार्यों का प्रभाव आत्मा पर पड़ता है। आत्मा में एक संस्कार बनता है। वही संस्कार सुख-दुःख और संसार परिभ्रमण का कारण है किसी विद्वान् ने लिखा भी है -

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता, परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।
अहं करोमीति वृथाभिमानः स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः ॥

अर्थात् सुख-दुःख को देने वाला अपना ही शुभाशुभ कर्म है। सुख-दुःख का दाता ईश्वर या अन्य किसी दैविक शक्ति को समझना बड़ी भारी भूल है। मैं ही सब कुछ करता हूँ ऐसा अभिमान करना भी व्यर्थ है। वस्तुतः संसार अपने कर्म रूप ही ग्रथित है।

जीवकृत क्रियाओं द्वारा आत्मा पर संस्कार पड़ते हैं यह मान्यता तो सभी आस्तिक दार्शनिकों की है किन्तु जैनाचार्यों का कहना है कि अनन्त पुद्गल परमाणु 23 वर्गणाओं में विभक्त हैं। सभी पुद्गल परमाणु कर्म रूप परिणमित नहीं होते हैं। केवल कार्मणवर्गणा वाले परमाणु ही कर्म का कार्य करते हैं उनमें भी अपने निश्चय उपादान के अनुसार ही वे वर्गणाएँ मिथ्यादर्शनादि बाह्य हेतु को प्राप्तकर कर्मभाव को प्राप्त होती हैं सभी नहीं। जिस प्रकार यह नियम है उसी प्रकार उपादानभाव को प्राप्त हुई सभी कार्मणवर्गणाएँ ज्ञानावरणादिरूप से कर्मभाव को प्राप्त नहीं होतीं किन्तु जैसे गेहूँ रूप परिणमन करने वाले बीज रूप स्कन्ध अलग होते हैं और चने रूप परिणमन करने वाले बीज रूप स्कन्ध भिन्न होते हैं यह सामान्य नियम है वैसे ही ज्ञानावरण रूप परिणमन करने वाली कार्मणवर्गणाएँ पृथक हैं। दर्शनावरणरूप परिणमन करने वाली कार्मणवर्गणाएँ भिन्न हैं। इसी प्रकार प्रत्येक कर्म रूप वर्गणाएँ हैं। इन ज्ञानावरणादि कर्मों का अपनी-अपनी जाति को छोड़कर अन्यकर्मरूप संक्रमित नहीं होने का यही कारण है तथा इसी आधार पर दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय का परस्पर संक्रमण नहीं होता। चारों आयुओं का परस्पर संक्रमण नहीं होता। संभवतः इनका भी यही कारण है।

कार्मणवर्गणा के सूक्ष्म पुद्गलस्कन्ध की कर्म संज्ञा को प्राप्त होते हैं जैसा कि आचार्य पूज्यपाद ने लिखा भी है- जीव मन, वचन और काय के द्वारा जो क्रियाएँ करता है उनसे प्रभावित होकर एक विशेष जाति के सूक्ष्म पुद्गल स्कन्ध जीव के साथ बंध जाते हैं। बन्ध को प्राप्त ये पौद्गलिक स्कन्ध ही कर्म संज्ञा को प्राप्त होते है।

कर्म सिद्धानत की उपयोगिता पर पं. सुखलाल संधवी के विचार हैं- "मनुष्य को किसी भी काम की सफलता के लिए परिपूर्ण हार्दिक शान्ति प्राप्त करनी चाहिए, जो एक मात्र कर्मसिद्धान्त से ही हो सकती है। आँधी और तूफान में जैसे हिमालय का शिखर स्थिर रहता है, वैसे ही अनेक प्रतिकूलताओं के समय शान्त भाव में स्थिर रहना यही सच्चा मनुष्यत्व है जो कि भूतकाल के अनुभवों से शिक्षा देकर मनुष्य को अपनी आगे की भलाई के लिए करता है परन्तु यह निश्चित है कि ऐसा मनुष्यत्व कर्म के सिद्धान्त पर विश्वास किये बिना कभी नहीं आ सकता। इससे यही कहना पड़ता है कि क्या व्यवहार क्या परमार्थ सब जगह कर्म का सिद्धान्त एक सा उपयोगी है कर्म के सिद्धान्त की श्रेष्ठता के सम्बन्ध में डॉ. मैक्समूलर का जो विचार है वह जानने योग्य है- "यह निश्चित है कि कर्ममत का असर मनुष्य जीवन पर बेहद हुआ है। यदि किसी मनुष्य को यह मालूम पड़े कि वर्तमान अपराध के सिवाय भी मुझको जो कुछ भोगना पड़ता है, वह मेरे पूर्व जन्म के कर्म का ही फल है तो वह पुराने कर्ज को चुकाने वाले मनुष्य की तरह शान्त भाव से उस कष्ट को सहन कर लेगा और वह मनुष्य इतना भी जानता हो कि सहनशीलता से पुराना कर्ज चुकाया जा सकता है तथा उसी से भविष्यत के लिए नीति की समृद्धि इकट्ठी की जा सकती है तो उसको भलाई के रास्ते पर चलने की प्ररेणा आप ही आप होगी। कोई भी अच्छा या बुरा कर्म नष्ट नहीं होगा। यह नीतिशास्त्र का मत और पदार्थशास्त्र का बल संरक्षण सम्बन्धी मत समान ही है। दोनों मतों का आशय इतना ही है कि किसी का नाश नहीं होता। किसी भी नीतिशिक्षा के अस्तित्व के सम्बन्ध में कितनी ही शंका क्यों न हो पर वह निर्विवाद सिद्ध है कि कर्मसिद्धान्त सबसे अधिक जगह माना गया है, उससे लाखों मनुष्यों के कष्ट कम हुए हैं और उसी मत से मनुष्यों को वर्तमान संकट झेलने की शक्ति पैदा करने तथा भविष्य जीवन को सुधारने में सहारा मिला है।

कर्मवाद आधुनिक साम्यवाद का निषेध करने वाला है। कर्मवाद ही यह बतलाता है कि प्राणीमात्र स्वकृतकर्म के अनुसार उसके फल का भोक्ता है। जीव को अपने किए कर्म का फल भोगना ही पड़ेगा। यह सर्वथा असंगत है। कि सबको समान बना दिया जाये। कर्म का फल न भोगना पड़े तो सभी स्वच्छन्द हो जायेंगे। कर्मसिद्धान्त को माने बिना बड़ी भारी विसंगति फैल जायेगी न तो कोई संसार से छूटने का प्रयन्त करेगा न मुक्ति की अभिलाषा करेगा क्योंकि जो अपने को बंधा हुआ अनुभव करेगा, वहीं छूटने का अनुभव करेगा।

जीवत्व की दृष्टि से तो सभी समान हैं। सभी की आत्मा अनन्त गुणों का पुञ्ज स्वरूप है, ऐसा समझकर किन्हीं भी जीवों के प्रति बैर विरोध एवं हिंसा की भावना उत्पन्न नहीं होना चाहिए।

जीव और कर्म के बन्ध होने पर कर्मों की कितनी अवस्थाएँ होती हैं? इसका उत्तर देते हुए नेमिचन्द्राचार्य कहते हैं -

बन्धुक्कट्टणकरणं संक्कममोकट्टुदीरणा सत्तं।
उदयुवसमणिधत्ती णिकाचणा होदि पडिपयडी। गो०कर्म० ४३७

अर्थात् बन्ध, उत्कर्षण, संक्रमण, अपकर्षण, उदीरणा, सत्त्व, उदय, उपशन, निधत्ति और निकाचना ये दश / अवस्थाएँ कर्म की होती हैं।

पुद्गल द्रव्य का कर्मरुप होकर आत्मप्रदेशों के साथ संश्लेष सम्बन्ध होना बन्ध है। कर्मों का जो स्थिति अनुभाग पूर्व में था उसमें वृद्धि का होना उत्कर्षण कहलाता है जो प्रकृति पूर्व में बंधी थी उसका अन्य प्रकृतिरुप होकर परिणमन करना संक्रमण है। कर्मों की स्थिति व अनुभाग जो पूर्व था उसको घटाना अपकर्षण कहलाता है। उदयावली के बाहर स्थित द्रव्य को अपकर्षणकरण के बल से उदयावली में लाना उदीरणा है। पुद्गलों का कर्मरूप रहना सत्त्व है।

पुद्गल द्रव्य का कर्मरूप होकर आत्मप्रदेशों के साथ संश्लेष सम्बन्ध होना बन्ध है। कर्मों का जो स्थिति अनुभाग पूर्व में था उसमें वृद्धि का होना उत्कर्षण कहलाता है जो प्रकृति पूर्व में बंधी थी उसका अन्य प्रकृतिरूप होकर परिणमन करना संक्रमण है। कर्मों की स्थिति व अनुभाग जो पूर्व था उसको घटाना अपकर्षण कहलाता है। उदयावली के बाहर स्थित द्रव्य को अपकर्षणकरण के बल से उदयावली में लाना उदीरणा है। पुद्गलों का कर्मरूप रहना सत्त्व है। कर्मों का अपनी पूर्वबद्ध स्थितिबन्ध के अनुसार उदय को प्राप्त होना उदय कहलाता है। जो कर्मपरमाणु उदीरणा को प्राप्त होने में समर्थ न हों उसे उपशान्त करण कहते हैं। जो कर्मपरमाणु उदयावली को प्राप्त करने में तथा अन्य प्रकृति रूप संक्रमण करने में समर्थ नहीं होता उसे निधत्ति कहते हैं। जो कर्म परमाणु उदयवली को प्राप्त करने में तथा अन्य प्रकृति रूप संक्रमण करने में अथवा उत्कर्षण अपकर्षण करने में समर्थ नहीं होता उसे निकाचित कहते हैं।

नरकादि चारों आयु कर्मों के संक्रमण करण नहीं होता है क्योंकि एक आयु अन्य आयु रूप नहीं बदलती है इसमें उत्तरप्रकृति संक्रमण न होने से 9 करण होते हैं। शेष सभी कर्म प्रकृतियों के दशकरण पाये जाते हैं। आगम में गुणस्थानों की अपेक्षा से करणचर्चा विस्तृत है, जो यहाँ विस्तारभय से नहीं की जा रही है।

उपर्युक्त दश करणों में संक्रमणकरण के उद्वेलनसंक्रमण, विध्यातसंक्रमण, अधःप्रवृत्तसंक्रमण, गुणसंक्रमण, सर्वसंक्रमण नामक अवान्तर भेद भी होते हैं।

उद्वेलनसंक्रमणः अधःप्रवृत्त आदि तीन करणों के बिना ही कर्मप्रकृतियों के परमाणुओं का अन्यप्रकृति रूप परिणमन होना उद्वेलनसंक्रमण है। यह आहारकयुगल सम्यक्त्वप्रकृति सम्यङ्मिथ्यात्व, देवगति देवगत्यानुपूर्वी, नरकगति-नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर वैक्रियिकशरीराङ्गोपाङ्ग, उच्चगोत्र और मनुष्यगति-मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन तेरह प्रकृतियों का ही होता है।

विध्यातसंक्रमण : मन्द विशुद्धता वाले जीव की स्थिति अनुभाग के घटानेरूप भूतकालीन स्थितिकाण्डक और अनुभागकाण्डक तथा गुणश्रेणी आदि ये प्रवृत्ति होना विध्यात संक्रमण है। यह विध्यातसंक्रमण सम्यक्त्वमोहनीय के बिना उद्वेलना की बारह प्रकृतियाँ, स्त्यानगृद्धित्रिक को आदि लेकर तीस प्रकृतियाँ असातावेदनीयादिक बीस और वज्रर्षभनाराचसंहनन, औदारिकशरीर, औदारिक शरीरङ्गोपाङ्ग तीर्थंकरप्रकृति तथा मिथ्यात्व इन 67 प्रकृतियों का होता है।

अधःप्रवृत्तसंक्रमणः बंधी हुई प्रकृतियों का अपने बंध में संभव प्रकतियों में परमाणुओं का जो प्रदेश संक्रमण होता है, उसे अधःप्रवृत्तसंक्रमण कहते हैं। यह संक्रमण मिथ्यात्व के बिना शेष 121 प्रकृतियों में होता है।

गुणसंक्रमणः जहाँ प्रतिसमय असंख्यातगुणश्रेणी के क्रम से कर्म परमाणु प्रदेश अन्य प्रकृतिरूप परिणमन करते हैं, उसे गुणसंक्रमण कहते हैं। यह गुणसंक्रमण सूक्ष्मसांपराय में बंधने वाली घातियाकर्मों की 14 प्रकृतियों को आदि लेकर 39 प्रकृतियाँ, औदारिकद्विक, तीर्थकर, वज्रवृषभनाराचसंहनन, पुरुषवेद और संज्वलन क्रोधादि तीन इन 47 प्रकृतियों को कम करके शेष रही 75 प्रकृतियों का होता है।

सर्वसंक्रमण : जो अन्त के काण्डक की अन्तिम काली के सर्वप्रदेशों में से अन्य रूप नहीं हुए हैं, उन परमाणुओं का अन्य रूप होना सर्वसंक्रमण है। यह संक्रमण तिर्यञ्च सम्बन्धी, 11 प्रकृतियाँ, उद्वेलना की 13 प्रकृतियां संज्वलनलोभ, सम्यक्त्वप्रकृति और सम्यङ्मिथ्यत्व प्रकृति इन तीन के बिना मोह की 25 और स्त्यानगृद्धि आदि तीन प्रकृतियाँ इस तरह 52 प्रकृतियों का होता है।

आयुकर्म में तो संक्रमण का निषेध किया गया है। शेष कर्मों में 10 ही करण कहे गये हैं। गुणस्थानों की अपेक्षा विचार करने पर मिथ्यादृष्टि से लेकर अपूर्वकरण गुणस्थान तक 10 करण होते हैं। अपूर्वकरण से 5 ऊपर सूक्ष्मसाम्यपराय नामक दशम गुणस्थान तक आदि के सात करण होते हैं सयोगकेवली तक संक्रमण को छोड़कर प्रथम छ करण होते हैं। अयोगकेवली के सत्व और उदय दो ही करण रहते हैं। उपशान्तकषाय नामक ग्यारहवें गुणस्थान में कुछ विशेषता है कि यहाँ मिथ्यात्व और सम्यङ्मिथ्यात्व का संक्रमण करण भी होता है अर्थात् इन दोनों के परमाणु दर्शनमोहनीय रूप परिणम जाते हैं। शेष प्रकृतियों का संक्रमण नहीं होता। अत छः ही करण होते हैं।

बन्धकरण और उत्कर्षणकरण ये दोनों करण अपने-अपने बन्ध स्थान तक ही होते हैं अर्थात् जिस प्रकृति की जहाँ तक बन्धव्युच्छित्ति होती है, वहीं तक होते हैं तथा संक्रमण मूलप्रकृतियों में तो होता नहीं है किन्तु उत्तरप्रकृतियों में होता है, वह भी सजातीय प्रकतियों में ही होता है। जैसे ज्ञानावरणकर्म की मतिज्ञानावरणादि पांच प्रकृतियाँ सजातीय प्रकृतियाँ हैं इन्हीं में उसका संक्रमण होता है। दर्शनमोह की मिथ्यात्व, सम्यङ्मिथ्यात्व का सम्यक्प्रकृति में संक्रमण होता है किन्तु चारित्रमोह में संक्रमण नहीं होता है। आयुकर्म की उत्तर प्रकृतियों का नरकायु आदि में नहीं होता अर्थात् नरकायु का संक्रमण तिर्यञ्चायु में या तिर्थञ्च मनुष्य आयु का देवायु में संक्रमण नहीं होता है।

सयोगकेवली के जो 85 प्रकृतियों की सत्ता शेष रहती है, उनका अपकर्षणकरण सयोगकेवली के अन्त समय तक होता है। क्षीणकषाय गुणस्थान में जिनकी सत्वव्युच्छित्ति होती है, ऐसो 16 प्रकृतियों तथा सूक्ष्मसांपराय में जिनकी सत्व व्युच्छित्ति होती है। ऐसा सूक्ष्मलोभ इन 17 प्रकृतियों का अपकर्षणकरण उनके क्षयदेश पर्यन्त होता है। क्षयदेश का काल यहाँ एक समय अधिक आवली मात्र जानना चाहिए।

देवायु का अपकर्षणकरण उपशान्तकषाय गुणस्थान तक होता है। मिथ्यात्वादि तीन तथा अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में क्षय को प्राप्त होने वाली सोलह प्रकृतियों का अपकर्षणकरणक्षयदेश अन्तकाण्डक के अन्तफालि पर्यन्त होता है। इसी प्रकार क्षपक श्रेणी के अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में क्षय को प्राप्त होने वाली अष्टकषायादिक 20 प्रकृतियों का अपकर्षणकरण भी अपने-अपने क्षयदेश तक होता है। उपशमश्रेणी में दर्शनमोह की मिथ्यात्वादि तीन और नरकगति-नरकगत्यानुपूर्वी आदि 16 प्रकृतियों का अपकर्षणकरण उपशान्तकषाय ग्यारहवें गुणस्थान तक होता है तथा आठ कषायादिकों का अपने-अपने उपशम के स्थान तक होता है। अनन्तानुबंधी चतुष्क का असंयतादि चार गुणस्थानों में यथा संभव विसंयोजन के स्थान तक ही अपकर्षण होता है। नरकायु वाले के असंयतगुणस्थान तक और तिर्यञ्च आयु वाले के देशसंयत गुणस्थान तक उदीरणा, सत्व और उदय ये तीन करण होते हैं। मिथ्यात्व प्रकृति का उदीरणाकरण उपशमसम्यक्त्व के सम्मुख जीव के मिथ्यात्वगुणस्थान के अन्त में एक समय अधिक आवलीकाल तक होता है। सूक्ष्मलोभ का उदीरणाकरण सूक्ष्मसाम्यराय गुणस्थान तक ही होता है।

उपशान्तकरण, निधित्तिकरण और निकाचितकरण ये तीन करण अपूर्वकरण गुणस्थान तक ही होते हैं। उक्त दश दशाओं का विवेचन आत्मा के साथ बन्ध को प्राप्त हुए कर्मों का होता है क्योंकि संसार अवस्था में प्रतिक्षण सभी जीव कर्मों तथा नौकर्मों को ग्रहण करते हैं जैसा कि गोम्मटसारकर्मकाण्ड में कहा गया है

देहोदयेण सहिओ जीवोआहरादिकम्मनोकम्मं,
पडिसमयं सव्वंगं तप्तायसपिंडओव्वणतं

अर्थात् शरीरनामा नामकर्म के उदय से जडकर्म परमाणु आत्मा के सम्पूर्ण प्रदेशों में एक साथ खिंचकर उसी तरह प्रवेश करते हैं जिस तरह की गर्म लोहे का गोला जल में डुबा दिए जाने पर चारों ओर से शीतल जल के परमाणुओं को खींचती है। कषाय की अधिकता और अन्दत से कर्मपरमाणु अधिक या कम बँधते हैं।

कर्मों की उक्त दश अवस्थाओं के विषय में धवल, जयधवल, गोम्मटसार आदि कर्मशास्त्रों में विस्तृत विचार किया गया है, जो लेख में प्रस्तुत करना संभव नहीं है। हाँ संक्षेप से कर्मों की बन्ध, उदय और सत्व ये तीन दशाएँ भी बतलायी गयी हैं। बन्ध की उदय, अनुदय और उदयव्युच्छित्ति इस उदयव्युच्छित्ति का उदय त्रिभंगी से और सत्व की सत्व असत्व और सत्वव्युच्छित्ति इस सत्व त्रिमंगी से गुणस्थानों और मार्गणास्थानों में गहन चर्चा की गई है, जो कर्मशास्त्रों से विशेष जिज्ञासु जान सकते हैं।

Design By
deesign
deesignwork@gmail.com